मानव अधिकार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डॉ0 जयसिंह यादव,

आकाशवाणी के सामने, ठाटीपुर गाँव,
गाँधी रोड, ग्वालियर (म.प्र.), भारत–474002

मानव समाज में कई स्तर पर कई तरह से विभेद मौजूद हैं। भाषा, रंग, मानसिक स्तर, प्रजातीय स्तर आदि इन स्तरों पर मानव समाज में भेदभाव का बर्ताव किया जाता रहा है इन सबके बावजूद कुछ अनिवार्यताएं सब समाजों में समान हैं। यही अनिवार्यता मानव अधिकार है, जो एक व्यक्ति को मानव होने के कारण मिलना चाहिए।

सामान्य अर्थ में 'अधिकार' शब्द का आशय यह है कि मनुष्य कुछ मूलभूत तत्वों से संयुक्त है। अंग्रेजी कहावतों में केवल 'अधिकृत करना' शब्द प्रयुक्त होता है। अधिकारों को कई दृष्टियों से देखा गया हैं मानव अधिकारों को कानूनी रूप मे, सामाजिक एवं नैतिक रूप में परिभाषित किया गया है।

मानव अधिकार के विषय में आर.जे. बिसेंट का विचार है कि ''मानव अधिकार वे अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के कारण प्राप्त है। इन अधिकार का आधार मानव स्वभाव में निहित है।''

ए.ए.सईद के अनुसार ''मानव अधिकारों का सबंध व्यक्ति की गरिमा से है एवं आत्मसम्मान का भाव जो व्यक्तिगत पहचान को रेखांकित करता है तथा मानव समाज को आगे बढ़ाता है।''

सारांशतः सभी परिभाषाओं से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि मानव अधिकार, मानवीय स्वभाव में ही अन्तर्निहित है तथा इन अधिकारों की अनिवार्यता मानव व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए सदैव से रही है।

मानव अधिकारों का ऐतिहासिक विकास

यद्यपि मानव अधिकार बीसवीं शताब्दी में विशेष रूप से लोकप्रिय हुआ, लेकिन इसकी जड़ें सदैव मानव समाज में विद्यमान रही हैं। इसका चरित्र द्वंदात्मक रहा है और इसी आधार पर मानव विकास संभव हो सका है।[1] मानव अधिकारों के विद्वान इसकी जड़ें प्राचीन यूनान एवं रोम में मानते हैं, जहाँ पर सर्वप्रथम स्टाईक दार्शनिकों ने प्राकृतिक कानून के रूप में मानव अधिकार की व्याख्या की थी।[2] इस विचारधारा की स्थापना जेनो आफ सिटियम ने की थी, जिसका दृष्टिकोण था कि एक वैश्विक कार्यशक्ति सभी चीजों का निर्धारण करती है इसलिये प्राकृतिक कानून के अनुसार, सब कुछ परखा जा सकता है।[3]

इस प्रकार स्टोइक दर्शन ने प्राकृतिक अधिकारों के स्वरूप निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी पाश्चात्य राजनीतिक दार्शनिक चिंतन में, यूनानी नगर राज्यों के समय से लेकर आधुनिक समय तक मानव अधिकार लगातार विचार–विमर्श का मुद्दा रहा है।[4] सुकरात और प्लेटो के समय में मानव अधिकार संबंधी विचार प्राकृतिक कानून और राजनीतिक आदर्शवाद से जुड़ा था। आगे चलकर, इन्हीं विचारों ने राजाओं एवं सम्राटों को भी प्रभावित किया। यह विचार बल पकड़ने लगा कि मानव जाति के कुछ प्राकृतिक अधिकार हैं जो राज्य की स्थापना के पहले से ही विद्यमान(मौजूद) थे। स्टोइक दार्शनिकों एवं मध्यकालीन ईसाई चिंतक सेंट आगस्टाइन ने इसी बात पर बल दिया है।[5]

मध्यकाल में, जिसकी कालावधि 13 वीं शती से वेस्टफेलिया की संधि (1648) तक विस्तृत है, पुनर्जागरण और सामंतवाद के पतन का दौर भी है।

इसी कालावधि में मनुष्य के परम्परागत विचारों, विश्वासों में परिवर्तन हुआ हैं जन समुदाय ने यह महसूस किया कि मानव अधिकार एक सामाजिक आवश्यकता हैं थामस एक्विनास (1224–1274) और हयूगोग्रोशियश (1583–1645) की शिक्षाएं, मैग्नाकार्टा (1215) अधिकार पत्र (1628) और ब्रिटिश अधिकार–पत्र (1689) इस बदलाव के प्रमाण थे।[6] इन सभी घटनाओं में विचार इस विश्वास के आधार भूमि थे कि समस्त मानव जाति कुछ मूलभूत, शाश्वत, प्राकृतिक अधिकारों से युक्त है, जो राज्य या समाज के उदय के पहले भी मौजूद थे।[7] इन्हीं विचारों ने आगे चलकर, 17वीं एवं 18 वीं शती के प्राकृतिक अधिकारों की पृष्ठभूमि तैयार की थी।

17 वीं के वैज्ञानिक एवं बौद्धिक उपलब्धियों ने जिसमें, गैलिलियों, न्यूटन की खोजें, थामस हॉब्स का भौतिकवाद, रेनेडस कार्टेज ओर लीबनिब्ज का तर्कवाद, स्पिनोजा का सर्वेश्वरवाद और बेकन तथा लॉक के अनुभववाद ने प्राकृतिक कानून और समस्त विश्व की एक व्यवस्था की धारणा को पुष्ट किया।[8]

18 वीं शती जो ज्ञानोदय की शती भी है, में मानवीय तर्क और विश्वास की वृद्धि हुई। इंग्लैण्ड, में जानलॉक, फ्रांस में मांटेस्क्यू, वाल्टेयर और रूसों ने मानवीय तर्क तथा प्राकृतिक कानूनों को बल प्रदान किया है।

जॉनलॉक जो आधुनिक उदारवाद का पिता तथा गौरवपूर्ण क्रांति का शिशु था, वास्तव में प्राकृतिक अधिकारों की धारणा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण बनाया। सामाजिक समझौता सिद्धान्त के अधिकारी विचारक होने के कारण लॉक ने यह विचार दिया कि सामाजिक या राजनीतिक संगठन की स्थापना के पहले ही मनुष्स को कुछ मूलभूत प्राकृतिक अधिकार प्राप्त थे, जैसे, जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता और सम्पत्ति का अधिकार इन अधिकारों में महत्वपूर्ण थे। उसने इन अधिकारों की रक्षा करते हुए राज्य द्वारा इनके हनन किए जाने पर व्यक्ति को राज्य के खिलाफ विद्रोह करने का अधिकार दिया है। 1688 के गौरवपूर्ण क्रांति के दौरान यह विचार इंग्लैण्ड में गूंज रहा था।

18 वीं शती के उत्तरवर्ती एवं 19 वीं शती के पूर्ववर्ती वर्षों में पश्चिमी संसार जानलॉक के विचारों का बहुत प्रभाव पड़ा। 1776 का पेनसिलवानिया घोषणा–पत्र, 1789 का फ्रेंच मानव अधिकार घोषणा–पत्र, तथा 1789 का मेसाच्यूट घोषणा–पत्र आदि सभी मानव अधिकारों के विचारों से भरे पड़े थे। ये घोषणा–पत्र एक तरह से राजनीतिक सर्वाधिकारवाद के खिलाफ घोषणाएं थी। मौरिस क्रेंसटन जैसे विद्धानों की धारणा है कि यह विचार राज्य सर्वाधिकारवार का प्रत्युत्तर था।

प्राकृतिक अधिकारों का विचार, मानव अधिकार के रूप में अपनी भाववाचक स्वभाव और धार्मिक पुरातन पंथी होने के कारण सदैव विवाद का विषय रहा है।आगे चलकर, उदारवादी एवं उग्रवादी दोनों विचार केन्द्रों में प्राकृतिक अधिकार गहरी आलोचना का विषय बना। इंग्लैण्ड में एडमण्ड बर्क एवं डेविड ह्यूम ने सर्वप्रथम इस विचार की जड़ों पर चोट की। उपयोगितावादी जर्मी वेंथम ने यह कहकर आलोचना की कि ''अधिकतर कानून का बच्चा है, वास्तविक कानून, वास्तविक अधिकार से पैदा होता है लेकिन काल्पनिक कानून से प्राकृतिक कानून एवं अयथार्थ अधिकार को जन्म देता है... प्राकृतिक अधिकार गलत धारणा है...'' डेविड ह्यूम ने भी प्राकृतिक अधिकारों को अवास्तविक एवं पौराणिक वस्तु माना है। प्राकृतिक अधिकारों की इस अवधारणा पर आघात 18 वीं शती के अंतिम वर्षो में शुरू होकर 19वीं एवं 20 वीं शताब्दी में जोर

पकड़ा। जॉन स्टुवर्ट मिल, हेनरीमेन, सेविगनी जैसे दार्शनिकों ने यह विचार दिया कि अधिकार सांस्कृतिक, तथा परिवेशगत स्थिति के परिणाम हैं जॉन ऑस्टिन जैसे न्यायविदों ने अधिकारों को सर्वोच्च सत्ता के द्वारा उद्भूत माना है।

19 वीं शती के जर्मन आदर्शवाद एवं यूरोपीय राष्ट्रवाद की पृष्ठभूमि पर उदित मार्क्सीय विचार पद्धति का व्यक्तिगत अधिकारों को नकारती रही लेकिन, अधिकारों को एक सामाजिक स्वीकृति का परिणाम मानती हैं इन सभी विचारधारात्मक आलोचनाओं एवं तर्कों के बावजूद प्राकृतिक अधिकार की धारणा किसी न किसी रूप में मानव समाज में जीती–जागती रही है। दासता के अंत की मांग, जनशिक्षा एवं सबके मातधिकार का आन्दोलन इस बात का सबूत है।

जर्मन नजीरवाद के उदय एवं पतन से मानव अधिकार के विषय में कुछ नए सवाल पैदा हुए। जर्मन आदर्शवाद ने मानव जाति पर भयंकर अत्याचार किए। जातीय उच्चता के सिद्धान्त ने जर्मन एवं यहूदियों के बीच नए संबंधो को जन्म दिया।यहूदियों एवं अन्य लोगों की हत्या करना हिटलर कालीन जर्मन लोगों का अधिकार बन गया था। लेकिन अंततोगत्वा यह मानव अधिकार नहीं था।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद गठित राष्ट्रसंघ(1919) के कारण मानव अधिकार की अवधारणा का विकास अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हुआ। यद्यपि राष्ट्र संघ की प्रसंविदा में मानव अधिकारों का स्पष्ट उल्लेख नहीं था, फिर भी राष्ट्र संघ ने इस दिशा में विशेषकर अल्पसंख्यकां एवं युद्ध प्रभावित लोगों के बारे में ध्यान दिया। राष्ट्र संघ ने श्रमिकों के अधिकारों एवं बालश्रम पर भी ध्यान दिया। यही कारण था कि 1919 में ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का गठन हुआ जो इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ की एक स्वयात्त संस्था के रूप में काम कर रहा है। लेकिन मानव अधिकार के विकास के चरण में द्वितीय विश्व युद्ध (1939–45) के बाद गठित संयुक्त राष्ट संघ वास्तव में इस दिशा में एक मील का पत्थर है। राष्ट्रपति रूजवेल्ट की 1941 की घोषणा, जिसमें भाषण, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता विश्वास, भय और आवश्यकता से स्वतंत्रता जैसे चार विषय निहित थे, भी एक महत्वपूर्ण कदम था। युद्ध के बाद चिंतित विश्व ने 10 दिसम्बर 1948 का एक वैश्विक मानव अधिकार की घोषणा की। बाद में यह दिन मानव अधिकार दिवस के रूप में विख्यात हो गया।

इसी प्रकार बीसवीं शताब्दी में मानव अधिकार की धारणा विस्तृत हुई। बदलते विश्व ने वास्तव में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तरों पर एक मानवीय जीवन दर्शन का विकास किया, तथा साथ ही इसके लिए संघर्ष भी चल रहा है। संविधानवाद की मांग, प्रतिनिधिक सरकार, सार्विक मताधिकार, जनशिक्षा एक तरफ से तथा दूसरी तरफ सोवियत समाजवादी गणतंत्र के उदय ने मानव जाति के मध्य लोकतांत्रिक एवं सबके अधिकारों के लिए मांग एवं संघर्ष का रास्ता चुना है।

मानव अधिकारों का वैश्विक घोषणा–पत्र वास्तव में समस्त मानव जाति के लिए कुछ मूलभूत अधिकारों की घोषणा करता है स्वतंत्रता, समानता एवं सामाजिक न्याय मानव अधिकारों के महत्वपूर्ण अभिलक्षण है।

संदर्भ

1. स्कॉट डेविडसन, मानव अधिकार फिलेडेलफिया ओपेन यूनिवर्सिटी प्रेस 1903 पृ. 45
2. रिचर्ड पिअरे क्लाउड और एच. बेस्टन वर्नूस, विश्व समुदाय में मानव अधिकार फिलेडे लेकिया, यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवानिया प्रेस, 1989

3. वही
4. मानव अधिकार मैनुअल, पृ. 11
5. वही पृ. 11
6. रिचर्ड पिअरे क्लाउड तथा वेस्टन वर्नस, एच।
7. वही
8. वही
9. एल. हेल्किल, दि राइट्स ऑफ मैन टुडे, बेस्ट–व्यू प्रेस, फोलोरेडा, यू.एस.ए. 1978, पृ. 18
10. वही पृ. 18–19
11. जी.एस. बजवा, भारत में मानव अधिकार, क्रियान्वयन तथा उल्लंघन, अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1985, पृ. 45
12. जे.सी. जोहरी, ह्यूमन राइट्स एण्ड न्यू वर्ल्ड आर्डर : टुवार्डस परफेक्शन ऑफ दि डेमोक्रेटिक ऑफ लाइफ, अनमोल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1996, पृ. 2